IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

'ये छोटे महायुद्ध' उपन्यास में व्यक्त वृद्धा की मानसिकता

- डॉ. कविता चांदगुड़े
सह प्राध्यापिका
किटेल कला महाविद्यालय धारवाड़

शशिप्रभा शास्त्री साठोत्तरी लेखिकाओं में महत्वपूर्ण रही हैं। हिन्दी उपन्यास ,कहानी, बाल साहित्य को उनका देय अत्यंत महत्वपूर्ण है। शालीनता,सांस्कृतिक अभिरुचि, व्यवहारगत सौम्यता की अनुभूति आपके साहित्य में मिलती है जीवन में व्याप्त अमिलता, मानवीय कुरूपता, मध्यवर्गीय जीवन की तृष्णा तथा पति-पत्नी के दांपत्य जीवन में वर्तमान राग-विराग, विरोध-अविरोध,राग-द्वेष, लगाव-अलगाव तथा जीवन की स्वाभाविक गति को अंकित की हैं।

शशिप्रभा जी ने प्रमुखतः नारी जीवन पर ही लिखा है। नारी के विविध रूपों को लेकर विभिन्न उपन्यास प्रस्तुत किए हैं। नारी मन के हर पहलू को छूते हुए उसके अंतर को उजागर किया है। नारी की हर समस्या को अपनी कृतियों में रेखांकित किया है। नारी के हर संवेदना को अभिव्यक्ति दी है।नारी के मन का कोई भी पहलू, कोना उनसे छूटा नहीं है नारी के हर रूप को उसकी हर संवेदना को बडे प्रभावशाली रुप से प्रस्तुत किया है।

'ये छोटे महायुद्" सन् 1988 में प्रकाशित हुआ है। इसमें हमारे घरों में आये दिन हो रही तकरारों एवं उनके कारणों को बहुत बारीकी से अंकित किया गया है। परिवार में सदस्यों के बीच सामंजस्य की आवश्यकता होती है। उसके अभाव में घर में अशांति का वातावरण होता है। व्यक्ति को अपने अहं एवं स्वार्थ का त्याग कर परिवार में शांति बनाए रखना है, ऐसा न करने पर वह खुद भी बेचैन रहता है और दूसरों को भी दुखी करता है। इसी सामान्य विषय को लेकर शशिप्रभा जी ने अद्भुत रूप से इस उपन्यास को रचा है।ऊपरी तौर से इसमें दो पीढ़यों के बीच संघर्ष दिखाई देता है पर स्वयं लेखिका के शब्दों में "एक पीढ़ी के ही दो भिन्न प्रकृति के व्यक्तियों के मध्य भी मनोमालिन्य, खटपट हो सकती है, होती है, उन्हीं मुद्दों, उन्हीं बातों को लेकर दो पीढ़ियों का प्रतिनिधित्व करनेवाले दो जन टकराते है, तब तब मूलबिंदु दो पीढ़ियाँ नहीं, विचारों के स्तर पर ये दो वर्ग कहे जा सकते है।'

इस उपन्यास की विशेषता है माँ बेटी का संघर्ष, सास बहु का संघर्ष तो विश्व प्रसिद्ध है। वास्तव में किसी एक के अतार्किक, असंयत व्यवहार से दो व्यक्तियों के बीच मतभेद आरंभ होता है जो धीरे- धीरे बढ़कर नासूर बन जाता है। फलतः परिवार विघटित होते जाता है। आजकल एकल परिवारों की बढ़ोत्तरी कई सामाजिक समस्याओं के लिए उत्तरदायी है। अतः लेखिका ने परिवार में समायोजन की आवश्यकता की मांग करती हैं। प्रस्तुत उपन्यास द्वारा संघर्ष रिश्तों में नहीं वरन् दो भिन्न प्रकृति, अलग विचारों, मुद्दों के बीच है, इसे दर्शाया है।

वास्तव में संघर्ष की जड गार्गीदेवी थी, उनकी महत्वाकांक्षा आजीवन उन्हें त्रस्त करता रहा। जीवन की परिस्थितियों से निरंतर वे जूझती रही और सफलता पाने पर भी उनका दंभी, तानाशाही व्यक्तित्व उन्हें सुख शांति से जीने नहीं देता। गार्गीदेवी एकलौती संतान होने के कारण पिता की लाडली थी महान विदुषी गार्गीदेवी का नाम एवं आर्य समाज के संस्कारों से श्रेष्ठता के भ्रम में दंभी प्रकृति की रही। अतः रूढ़िवादी ससुराल में सामंजस्य स्थापित न कर पति के साथ शहर में रहने लगी। पति के आकस्मिक मृत्यु के कारण उन्हें तीन बेटी और एक बेटे की परवरिश की जिम्मेदारी उठानी पड़ी। घर एवं बाहर के कार्यों में उलझी गार्गीदेवी का ममतामयी मातृहृदय कठोर बनता गया। बच्चों के उन्नति के लिए कडे अनुशासन की आवश्यकता के भ्रम में बाल हृदयों से दूर होती गयी। बच्चे बढ़कर अपने-अपने जीवन में व्यस्त हो गए तब भी गार्गीदेवी का रवैया न बदला तो अब तक जो माँ के प्रति भय था वह उपेक्षा, उदासीनता में बदलता गया। अपने मनपसंद बहु को लाने पर भी उनकी दखलअंदाजी, तानाशाही वृत्ति आदि से शीघ्र ही उन्हें अपने एकलौते बेटे से अलग होना पड़ा। अपने परिश्रम से बनाए घर को त्यागकर छोटी बेटी लोपा के घर आश्रिता बनना पड़ा जो गार्गीदेवी जैसी स्वाभिमानी के लिए बडा यातनामयी था।

लोपा और स्वरूपनारायण दोनों नौकरी करने के कारण माँ का उनके घर पहुँचना उनके लिए वरदान ही रहा। उनके तीन बच्चों की परवरिश, घर के सभी कार्यों की बागडोर सम्हालते हुए गार्गीदेवी संतृप्त रहीं। बेटी और दामाद भी माँ को घर की बुजुर्ग, मुखिया का सम्मान देकर अपनी जिम्मेदारियों से राहत लिए थे।गार्गीदेवी का स्वाभिमान मन उन्हें बेटी और दामाद पर बोझ बनने से विरोध करता रहा। अतः वे स्कूल में नौकरी करने लगी। फलतः लोपा को फिर एक बार संपूर्ण घर की जिम्मेदारियों उठानी पड़ी। साथ ही माँ के धर्मकर्म के नियम आदि से दो-दो नौकरों के बावजूद माँ के लिए अलग खाना, बच्चों की देखरेख करना पड़ा। गार्गीदेवी का स्वभाव था कि दूसरों के कार्यों से कभी तृप्त नहीं होती। अतः बेटी के कामों में भी नुक्स निकालती, उसे आदेश देती कि काम कैसे किया जाता है। लोपा अब बच्ची नहीं थी जो माँ के कदमों पर ही चलती रहे। माँ के रोकटोक से कभी-कभी उसे लगता कि रसोई में भी आजादी नहीं, लोपा को बच्चों को कडे अनुशासन में रखने की ताकीद देती। छुट्टियों में गार्गीदेवी दूसरी बेटियों के घर चली जाती तो लोपा को बच्चों की छुट्टी होने के कारण दुगुनी परेशानी उठानी पड़ती। उसे लगता कि माँ कितनी स्वार्थी है, जे केवल अपनी मौज-मस्ती, आराम का ही खयाल करती है, कभी दूसरों के बारे में नहीं सोचती। दूसरे बेटियों के घरों में भी उनकी आका प्रवृत्ति के फलस्वरूप उनसे भी नाता टूटता गया। दरअसल स्वरूपनारायण के मृदु स्वभाव एवं "एक बुजुर्ग महिला को अगर अपने घर में

रखने से उनका कुछ उपकार हो रहा है तो उन्हें रहने दो, तुम्हें भी वृद्ध सेवा का अवसर मिलेगा " इन विचारों के कारण ही गार्गीदेवी यहाँ टिक पायी थी। पर बार-बार भूल जाती कि वे आश्रिता हैं, अपने आश्रयदाता की इच्छाओं का भी उन्हें खयाल रखना है। कभी-कभी दामाद के साथ भी विवाद करती । बच्चे तो साफ-साफ नानी से वागयुद्ध करते। घर से ऊबकर वे आश्रम चली गयी। किन्तु आश्रम के नियम, वहाँ का भोजन उन्हें रास नहीं आया। वानप्रस्थ में दीक्षित होने पर भी लौकिक लालसाओं से मुक्त नहीं हो पातीं। उनका चटकोरा जीब चटपटा खाने के लिए तरसता, आश्रम के खर्च उठाना भी उनके लिए दुस्सह होने लगा तो वे वापस घर लौटी। आश्रमवास के कटु अनुभवों के कारण कुछ दिनों तक परिवार में घुल मिलकर रही। इससे सभी प्रसन्न थे किन्तु उनकी धार्मिक आचरण, शुद्ध या अशुद्धी की क्रियाएँ सबको तरसाने लगी। ऊपर से गार्गीदेवी में प्रवचन सुनाने की सनक शुरु हुई तो उनका सम्मान रखते हुए सभी प्रवचन सुनने लगे। हर दिन घर के सभी सदस्यों को एक ही समय में शाम का एक घंटा निकालना बड़ा कठिन था। इससे बच्चों का संयम भी टूटने लगा, बडा पोता सुधीन्द्र नानी से प्रवचन सुनने से साफ इनकार कर दिया तो प्रवचन का काण्ड खत्म हुआ।

गार्गीदेवी में ढलती उम्र में भी अपने नाम प्रतिष्ठा, प्रसिद्धी की आकांक्षा बढ़ते ही गया। अखबारों से वे कहीं पन्ने काटकर रखती, भाषणों के लिए कई विचार संग्रहित करती। फिर भी भाषण देने का मौका उन्हें परिवार में नहीं मिला तो महिला मंडल को स्थापित कर घर-घर जाकर भजन, प्रवचन करने लगी। मंडली के कार्यों में इतनी व्यस्त रही कि अक्सर थक हारकर ही घर लौटती। बेटी को ही अब माँ की सेवा करना पडा। पर गार्गीदेवी के आका प्रवृत्ति, आक्षेपों से लोपा का संयम भी टूटने लगा तो वह माँ का सीधे-सीधे विरोध करने लगी। इस तरह माँ बेटी के बीच तकरार बढ़ते रहे जिससे सदा घर में अशांति छाने लगा। स्वरूपनारायण का भी ट्रान्सफर हुआ और बच्चे भी पढ़ने दूसरे शहर गये। घर में माँ और बेटी दो ही रहने के बावजूद उनमें गिटपिट चलता रहा। माँ के असहयोग से लोपा भी उनसे अनबोला करने लगी। उसने खामोश रहकर अपने मन की भडास डायरी में उतारने लगी। चित्रकला में व्यस्त होकर अपने मन को रमाने का प्रयास किया। गार्गीदेवी को बेटी की चित्रकारिता असंस्कृत लगती। वे कलाकारों, कला को हीन दृष्टि से देखती। लोपा को ताने देती । लोपा माँ के वाक्प्रवाह से तिलमिलाती। अपने आनंद के लिए कुछ करना भी माँ के नजरों में पाप है, उसे दुखी बनाता ।

लोपा ने बड़े बेटे का ब्याह आधुनिक पद्धती से किया तो आर्यसमाजी गार्गीदेवी दुखी हुई । बहु के साथ लोपा का सौहार्दपूर्ण व्यवहार उन्हें चुभने लगा। बहु के साथ सख्ती बरतने कहती। बहु ने लड़की को जन्म दिया तो पूरे परिवार को नास्तिक घोषित किया। लोपा अपनी बेटी प्रीति के विवाह कार्यों में व्यस्त रही। उसकी कठिनाइयों को जानकर भी गार्गीदेवी ने कोई मदद नहीं किया क्यों कि प्रीति का रिश्ता तय करने में उनसे कोई सलाह नहीं लिया था। वह भूल जाती कि उनकी बेटी भी अब उन्हीं के समान अपने बच्चों के निर्णय लेने में सक्षम है। ऐसी छोटी-छोटी आक्षेपों के कारण मना करने पर भी वे फिर से दुबारा आश्रम चली गयी। आश्रमवास की कठिनाइयों से पछताती रही कि बेकार में उन्होंने घर छोड़ा, पर

उनका आत्माभिमान उन्हें वापस लौटने से रोकता रहा । लोपा भी माँ से त्रस्त होकर जब उनकी इच्छा हो तो लौटे यही सोचती रही। गार्गीदेवी बीमार होकर प्रबंधकों की सहायता से घर पहुंची। बेटी की सेवा से शीघ्र ही स्वस्थ होकर पूर्ववत मंडली के कार्यों में व्यस्त हुई। आखरी दम तक अपने मान-सम्मान के लिए दौड़ती हुई गार्गीदेवी मृत्यु के आहोश में पहुँच गयी। माँ की मृत्यु पर लोपा पछताती रही कि माँ का पूरा सेवा नहीं की। माँ के प्रति अति प्रेम, स्नेह रखते हुए भी लोपा माँ के हठी प्रवृत्ति के कारण लोपा उन्हें सुखी नहीं बना पायी।

निष्कर्ष :

गार्गीदेवी छुटपन से ही अत्यंत स्वाभिमानी, कुशाग्रमती थी। घर की लाडली जो पति के संयुक्त परिवार में जम नहीं पायी। पति के आकस्मिक मृत्यु से छोटे चार बच्चों का लालन पालन का भार उठाना उनके लिए आसान नहीं था। बच्चों के उज्वल भविष्य को ही अपना लक्ष्य बनाकर जुट गई। अतः वह बच्चों के प्रति अधिक कठोर रही। अनुशासन में ही व्यक्ति का सही विकास होगा इस भ्रम के कारण वह बच्चों के मन से दूर होती रही। सभी बच्चों का विवाह कर जिम्मेदारियों से मुक्त हुई। उनके समस्त संघर्ष, मेहनत का फल उन्हें मिल चुका था। पर उनका व्यक्तित्व कभी रुककर आराम लेनेवाला न था। अब भी वह अपने नियमानुसार घर को संचालित करना चाहती। बहु जो अपने गृहस्थी के सपने ले आयी थी, सास के पदचिह्नों तले चलना अस्वीकार किया। दरअसल गार्गीदेवी की कठोर वाणी, आदेश आज्ञा ने ही बहु को उनसे दूर कर दिया । अतः उन्हें अपना घर त्यागकर बेटी के घर पहुँचना पड़ा। जिस घर को अपने खून से सींचा था उसी घर को छोड़कर जाना गार्गीदेवी के लिए बड़ा आघात-सा था।

लोपा एवं स्वरूप नारायण का सौहार्दपूर्ण व्यवहार, उन्हें बुजुर्ग का सम्मान देना, उन्हें लंबे समय तक उस घर में रोके रहा। बेटी की गृहस्थी को सम्हालते हुए वे आराम से रह सकती थी। पर उनका आत्माभिमान, ढलती उम्र में भी अपनी पद-प्रतिष्ठा की लालसा ने उन्हें सदा कुछ न कुछ करने के लिए प्रेरित करता रहा। यह उनके महत्वाकांक्षा का ही परिणाम था । घर में उनकी आका न चली तो संघ बनाकर मर-मिटती रही। अपने परिवार के प्रति सोचा होता तो उन्हें निराश न होना पड़ता। बाहर से जितनी दयालु होती पर अंदर से उतनी ही व्यग्र, जिदी हो जाती जिससे सदा घर में अनबन होता। शांति की तलाश में वे भटकती रही जबकि व्यक्ति शांति को अपने घर में ही पाता है।

आधार ग्रंथ:

१.शशिप्रभा शास्त्री, ये छोटे महायुद्द, राजपाल एंड सन्ज, नई दिल्ली, १९८८
२.मलती अद्वानी, लेखिकाओं की नवें दशक की हिंदी कहानियोम में पारिवारिक संबंध, सार्थक प्रकाशन, नई दिल्ली, १९९९
३.रुक्मिणीदेवी, डॉ. शशिप्रभा शास्त्री : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, विश्वभारती पब्लिकेशन, नई दिल्ली,२००७